जयशंकर प्रसाद

जीवन परिचय

प्रसाद जी का जन्म सुँघनी साहु के नाम से प्रसिद्ध काशी के एक सम्पन्न वैश्य घराने में सन् 1889 में हुआ था। इनके पितामह श्री शिवरत्न साहु सुरती के प्रसिद्ध व्यवसायी, बड़े दयालु और दानी-स्वभाव के व्यक्ति थे। पान के मसाले में प्रयुक्त होने वाली सुगंधियुक्त सुर्ती के निर्माण के कारण इन्हें 'सुँघनी' साहु के नाम से जाना जाने लगा। आगे चलकर इनका परिवार भी सुँघनी परिवार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद के पिता श्री देवी प्रसाद में भी पैतृक गुण मौजूद थे। साहित्य जगत में यह बात बहुत प्रसिद्ध थी कि काशी में गुणीजनों का आदर केवल दो ही स्थानों पर होता है - एक काशी नरेश के यहाँ दूसरा सुंघनी साहु के यहाँ। इससे स्पष्ट पता चलता है कि सम्पन्नता के साथ ही गुण ग्राहकता प्रसाद की वंश-परम्परा की एक अनिवार्य विशेषता थी।

अत्यंत अल्प आयु में कई बड़े भाई बहनों की मृत्यु के कारण प्रसाद को अपने माँ-बाप का अपार स्नेह मिला। लेकिन 12 वर्ष की आयु में पिता और 15 वर्ष की आयु में माँ के निधन के कारण बालक प्रसाद की नियमित पढ़ाई छूट गयी। एक मात्र अभिभावक बड़े भाई शंभुरत्न का देहांत भी माँ के निधन के दो ही वर्ष बाद हो गया। पिता की मृत्यु के पश्चात् पारिवारिक सम्पत्ति के विभाजन को लेकर चलने वाले गृह-कलह और मुकद्मेंबाजी में पिता और पितामह द्वारा अर्जित लाखों रूपए मुकद्मेंबाजी में लग गए। बड़े भाई की मृत्यु के बाद विरासत के रूप में प्रसाद को दुकान के नाम बहुत बड़ा कर्ज़ मिला। अपने संयम, व्यवहार कुशलता और अध्यवसाय का परिचय देते हुए इन्होंने धीरे-धीरे स्थिति को संभाला। इस प्रकार की विषम स्थितियों में प्रसाद ने अपने स्वाध्याय को चालू रखा। दस से बारह वर्ष की अवस्था में इन्होंने काशी के क्वींस कालेज में अध्ययन अवश्य किया, लेकिन बाद में घर पर ही इनकी शिक्षा पूरी हई। काशी के प्रसिद्ध विद्वान दीनबंधु ब्रह्मचारी से इन्होंने संस्कृत के प्राचीन साहित्य का ज्ञान प्राप्त किया। इन्होंने घर पर ही हिंदी, उर्दू और अंग्रेज़ी भाषा-साहित्य की नवीन गतिविधियों से भी पूर्ण परिचय प्राप्त किया। फलस्वरूप प्रसाद जी में वर्तमान की आँखों से अतीत को देखने और अतीत की कसौटी पर वर्तमान को परखने के अद्भुत कौशल का विकास हुआ।

माता, पिता और बड़े भाई की अकाल मृत्यु के कारण भाभी के निर्देश पर अपने विवाह की व्यवस्था इन्हें स्वयं करनी पड़ी। कुछ ही वर्षों में इनकी पत्नी की मृत्यु हो गयी। मित्रों और रिश्तेदारों के आग्रह पर इन्हें दूसरा विवाह भी करना पड़ा। किंतु प्रथम संतान के जन्म के समय ही माँ और शिशु-दोनों स्वर्गवासी हो गए। इससे प्रसाद के भावुक और कोमल हृदय को गहरा आघात लगा। आगे चलकर भाभी के उत्कट आग्रह पर उसके संतोष के लिए इन्होंने तीसरा विवाह भी किया, जिससे रत्नशंकर नामक पुत्र की प्राप्ति हुई।

प्रसाद के व्यक्तित्व में उदारता, व्यवहार कुशलता और विद्वत्ता का अद्‌भुत मिश्रण था। प्राचीन के प्रति गहरी आस्था के बावजूद वे नवीन के प्रति जिज्ञासा और प्रशंसा के भाव से ओत-प्रोत थे। इनका जीवन अत्यंत नियमित था। इन्होंने इधर-उधर के बाहरी कामों में अपने को कभी नहीं उलझाया। प्रातः जल्दी उठकर लेखन-कार्य में लीन रहना, फिर थोड़े समय में भ्रमण, स्नानादि कार्यों से निवृत्त होकर दुकान पर बैठना, दोपहर को भोजन और विश्राम के बाद पुनः व्यावसायिक कारोबार की देखभाल करना तथा संध्या के समय साहित्यिक मित्रों से विभिन्न विषयों पर चर्चा करना - यही इनकी दिनचर्या थी। अविराम लेखन और शारीरिक श्रम का प्रसाद के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ा। 1939 ई0 में सामान्य ज्वर ने धीरे-धीरे तपेदिक (टी.बी.) की गंभीर बीमारी का रूप धारण कर लिया। अतः नवम्बर 1939 में इनका देहावसान हो गया। अपनी 48 वर्ष की अल्पायु में ही इन्होंने हिंदी साहित्य के भंडार को अपनी कविताओं, कहानियों, नाटकों आदि से सम्पन्न कर दिया।

साहित्यिक योगदान

प्रसाद का जितना महत्व कवि के रूप में रहा है एक सफल गद्यकार के रूप में भी इनका उतना ही महत्व है। अतीत के ऐतिहासिक तथ्यों में वर्तमान की कल्पना का रंग देकर प्रसाद ने चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त, अजात शत्रु, राज्यश्री, ध्रुव स्वामिनी जैसी कालजयी नाट्य-कृतियों की रचना की है। इनके साथ ही विशाख, जन्मेजय का नाग यज्ञ, कल्याणी परिणय, एक घूँट आदि इनके अन्य नाटक हैं।

आकाशदीप, इन्द्रजाल, प्रतिध्वनियाँ, छाया और आँधी शीर्षक से प्रकाशित प्रसाद के पाँच कहानी संग्रह, कथा-सम्राट प्रेमचन्द की कहानी परम्परा के समानांतर एक भिन्न परम्परा की दृढ़ आधारशिला तैयार करते हैं। इन कहानियों के साथ ही प्रसाद ने कंकाल, तितली और इरावती के रूप में एक अधूरा उपन्यास लिखकर उपन्यास के क्षेत्र में भी अपने कौशल का परिचय दिया है। अपने निबंधों में वे कविता, नाटक, छायावाद, रहस्यवाद, आदर्शवाद और यथार्थवाद के महत्वपूर्ण मुद्दों पर गंभीर और मौलिक चिंतन को उजागर करते हैं।

हिंदी-काव्य के क्षेत्र में प्रसाद की 'कामायनी' आधुनिक काल का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। यही उनकी कीर्ति का प्रमुख स्तंभ भी है। कामायनी में प्रसाद ने महाप्रलय के बाद सृष्टि के आरंभ में जीवन विकास का कलात्मक परिचय दिया है। इस महाकाव्य में इन्होंने मनु, श्रद्धा और इड़ा जैसे तीन प्रमुख पात्रों को क्रमशः मन, हृदय और बुद्धि का प्रतीक बनाकर मानवीय मनोवृत्तियों के मनोवैज्ञानिक विकास का अत्यंत स्वाभाविक चित्रण किया है। चिंता, आशा, काम, श्रद्धा, लज्जा, ईर्ष्या, आनंद आदि जैसे मनोभाव सूचक सर्गों में विभक्त कर 'कामायनी' को प्रसाद ने आधुनिक मानव जीवन के विकास का एक महाकाव्य बना दिया है।

प्रसाद की अन्य काव्य-रचनाओं में'आँसू' शीर्षक मुक्तक काव्य का भी विशेष महत्व है। इसमें उदात्त प्रेम के संयोग और विशेष रूप से वियोग की भावनाओं का अत्यंत मार्मिक चित्रण हुआ है। प्रसाद के जीवन को देखते हुए ऐसा लगता है कि'आँसू' में उनकी अतृप्त काम-भावना की स्मृतियाँ ही अनेक रूपों में, अनेक कोणों से उभरी हैं।

भाषा और शिल्प की दृष्टि से प्रसाद जी की कविता का उत्कर्ष देखते ही बनता है। संस्कृतनिष्ठ परिनिष्ठित हिंदी के प्रयोग के साथ ही इन्होंने अपने काव्य में प्रतीक विधान और लाक्षणिक शैली का प्रयोग कर अपने सूक्ष्म भावों को मूर्त रूप प्रदान किया है। भावों के साथ ही प्राकृतिक एवं मानवीय सौन्दर्य के चित्रण में इन्होंने बिम्बों का सहारा लेकर उसे अत्यधिक प्रभावोत्पादक बनाया है।'आँसू' से लेकर उनकी सभी मुक्तक और प्रबंधात्मक रचनाएँ गीति शैली में प्रस्तुत की गयी हैं। गीतात्मकता की यह प्रवृत्ति उनके प्रख्यात महाकाव्य'कामायनी' की प्रमुख विशेषता बन गयी है। गीति शैली में प्रबंध-रचना का इसे सर्वोत्तम उदाहरण माना जा सकता है। भावानुकूल शब्द-योजना, लाक्षणिक शैली, समुचित प्रतीक विधान, बिम्बों के कुशल प्रयोग आदि के माध्यम से प्रसाद जी ने अपने काव्य को सरस, आकर्षक और अत्यधिक प्रभावोत्पादक बनाया है। प्रसाद जी की कुल रचनाएँ निम्नलिखित हैं :

काव्य : 'कानन कुसुम', 'महाराणा का महत्व', 'चित्रधार', 'प्रेम पथिक', 'झरना', 'आँसू', 'लहर' तथा 'कामायनी'।

नाटक : 'विशाख', 'अजातशत्रु', 'जनमेजय का नागयज्ञ', 'कामना', 'स्कंदगुप्त', 'एक घूँट', 'चंद्रगुप्त' तथा 'ध्रुवस्वामिनी'।

उपन्यास : 'कंकाल', 'तितली' तथा 'इरावती' (अपूर्ण)

कहानी संग्रह : 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप' तथा 'इंद्रजाल'।

निबंध : 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध'।

'आँसू' (काव्यांश)

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

मानस सागर के तट पर
क्यों लोल लहर की घातें
कल कल ध्वनि से हैं कहती
कुछ विस्मृत बीती बातें ?

आती है शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी
टकराती बिलखाती सी
पगली सी देती फेरी ?

क्यों व्यथित व्योमगंगा सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना तरङ्गिनि मेरी
लेती है मृदुल हिलोरें ?

जीवन की जटिल समस्या
है बढ़ी जटा सी कैसी
उड़ती है धूल हृदय में
किसकी विभूति है ऐसी ?

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति सी छायी
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आयी।

मेरे क्रन्दन में बजती
क्या वीणा, जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणापट बुनते हो।

रो रोकर सिसक सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अन्तर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरदमाला
पा कर इस शून्य हृदय की
सब ने आ डेरा डाला।

घिर जातीं प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आ कर मेरी
तम चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुस्क्याता था आँगन में
हाँ, कौन बरस जाता था
रस बूँद हमारे मन में ?

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर !
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन संगी
कल्याण कलित इस मग के।

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये
स्वर्गङ्गा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढ़ाये।

गौरव था, नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिञ्चन
देखे ज्यों स्वप्न सबेरे।

मधु राका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको
परिचित से जाने कब के
तुम लगे उसी क्षण हमको।

परिचय राका जलनिधि का
जैसे होता हिमकर से
ऊपर से किरणें आतीं
मिलती हैं गले लहर से।

मैं अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

'कामायनी' ('श्रद्धा' सर्ग)

"कौन तुम ? संसृतिज[1]-लनिधि[2] तीर
तरंगों से फेंकी मणि एक,
कर रहे निर्जन का चुपचाप
प्रभा की धारा से अभिषेक?

मधुर विश्रांत और एकांत -
जगत का सुलझा हुआ रहस्य,
एक करुणामय सुन्दर मौन
और चंचल मन का आलस्य !"

सुना यह मनु ने मधु गुंजार
मधुकरी का सा जब सानंद,
किये मुख नीचा कमल समान
प्रथम कवि का ज्यों सुन्दर छंद;

एक झिटका सा लगा सहर्ष,
निरखने लगे लुटे से, कौन -
गा रहा यह सुन्दर संगीत ?
कुतूहल रह न सका फिर मौन।

और देखा वह सुन्दर दृश्य
नयन का इंद्रजाल अभिराम;
कुसुम-वैभव में लता समान
चंद्रिका से लिपटा घनश्याम।

हृदय की अनुकृति वाह्य उदार
एक लम्बी काया, उन्मुक्त;
मधु पवन क्रीड़ित ज्यों शिशु साल[3]
सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।

---

1 सृष्टि-प्रक्रिया, 2 समुद्र, 3 साल वृक्ष।

मसृण[1] गाँधार देश के, नील
रोम वाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु[2] कांत
बन रहा था वह कोमल वर्म[3]।

नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग;
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ-बन बीच गुलाबी रंग।

आह ! वह मुख ! पश्चिम के व्योम -
बीच जब घिरते हों घन श्याम;
अरुण रवि मंडल उनको भेद
दिखाई देता हो छविधाम।

या कि, नव इन्द्र नील लघु शृंग[4]
फोड़ कर धधक रही हो कांत;
एक लघु ज्वालामुखी अचेत
माधवी[5] रजनी में अश्रांत

घिर रहे थे घुँघराले बाल
अंस अवलंबित मुख के पास,
नील घन शावक से सुकुमार
सुधा भरने को विधु[6] के पास।

और उस मुख पर वह मुसक्यान !
रक्त किसलय[7] पर ले विश्राम
अरुण की एक किरण अम्लान
अधिक अलसाई हो अभिराम।

---

1 कोमल, 2 शरीर, 3 कवच, 4 छोटे-छोटे सींग, 5 सुंदर फूल, 6 चंद्रमा, 7 कोमल पत्ता।

नित्य यौवन छवि से हो दीप्त
विश्व की करुण कामना मूर्ति;
स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण
प्रकट करती ज्यों जड़ में स्फूर्ति।

उषा की पहली लेखा कांत,
माधुरी से भींगी भर मोद;
मद भरी जैसे उठे सलज्ज
भोर की तारक द्युति की गोद।

कुसुम कानन-अंचल में मन्द
पवन प्रेरित सौरभ साकार,
रचित परमाणु पराग शरीर
खड़ा हो ले मधु का आधार।

और पड़ती हो उस पर शुभ्र
नवल मधु-राका मन की साध;[1]
हँसी का मद विह्वल प्रतिबिम्ब
मधुरिमा खेला सदृश अबाध !

कहा मनु ने, "नभ धरणी बीच
बना जीवन रहस्य निरुपाय;
एक उल्का सा जलता भ्रांत,
शून्य में फिरता हूँ असहाय।

शैल निर्झर न बना हतभाग्य
गल नहीं सका जो कि हिम खंड
दौड़ कर मिला न जलनिधि अंक
आह वैसा ही हूँ पाषंड[2]

---

1 आकांक्षा, 2 छल।

पहेली सा जीवन है व्यस्त
उसे सुलझाने का अभिमान
बताता है विस्मृति का मार्ग
चल रहा हूँ बन कर अनजान।

भूलता ही जाता दिन रात
सजल अभिलाषा कलित[1] अतीत;
बढ़ रहा तिमिर गर्भ में नित्य
दीन जीवन का यह संगीत।

क्या कहूँ, क्या हूँ मैं उद्भ्रांत?
विवर में नील गगन के आज
वायु की भटकी एक तरंग;
शून्यता का उजड़ा सा राज।

एक विस्मृति का स्तूप अचेत;
ज्योति का धुँधला सा प्रतिबिम्ब;
और जड़ता की जीवन राशि
सफलता का संकलित विलम्ब।

"कौन हो तुम वसंत के दूत
विरस पतझड़ में अति सुकुमार !
घन तिमिर में चपला की रेख,
तपन में शीतल मंद बयार।

नखत[2] की आशा किरण समान,
हृदय के कोमल कवि की कांत -
कल्पना की लघु लहरी दिव्य
कर रही मानस हलचल शांत!"

---

1 सुंदर, 2 नक्षत्र।

लगा कहने आगंतुक व्यक्ति
मिटाता उत्कंठा सविशेष;
दे रहा हो कोकिल सानन्द
सुमन को ज्यों मधुमय सन्देश :-

'भरा था मन में नव उत्साह
सीख लूँ ललित कला का ज्ञान
इधर रह गंधर्वों के देश,
पिता की हूँ प्यारी संतान।

घूमने का मेरा अभ्यास
बढ़ा था मुक्त व्योम-तल नित्य;
कुतूहल खोज रहा था व्यस्त
हृदय सत्ता का सुन्दर सत्य।

दृष्टि जब जाती हिम-गिरि ओर
प्रश्न करता मन अधिक अधीर,
धरा की यह सिकुड़न भयतीत
आह कैसी है? क्या है पीर?

मधुरिमा में अपनी ही मौन
एक सोया संदेश महान,
सजग हो करता था संकेत;
चेतना मचल उठी अनजान।

बढ़ा मन और चले ये पैर
शैल मालओं का शृंगार;
आँख की भूख मिटी यह देख
आह कितना सुन्दर सम्भार !

एक दिन सहसा सिंधु अपार
लगा टकराने नग[1] तल क्षुब्ध;
अकेला यह जीवन निरुपाय
आज तक घूम रहा विश्रब्ध[2]।

---

1 पर्वत, 2 विश्वसनीय।

यहाँ देखा कुछ बलि का अन्न
भूत-हित-रत किसका यह दान !
इधर कोई है अभी सजीव,
हुआ ऐसा मन में अनुमान !

तपस्वी ! क्यों इतने हो क्लांत ?
वेदना का यह कैसा वेग ?
आह ! तुम कितने अधिक हताश
बताओ यह कैसा उद्वेग !

हृदय में क्या है नहीं अधीर,
लालसा जीवन की निश्शेष ?
कर रहा वंचित कहीं न त्याग
तुम्हे, मन में धर सुन्दर वेश !

दुःख के डर से तुम अज्ञात
जटिलताओं का कर अनुमान;
काम से झिझक रहे हो आज,
भविष्यत् से बन कर अनजान।

कर रही लीलामय आनन्द,
महाचिति सजग हुई सी व्यक्त,
विश्व का उन्मीलन अभिराम
इसी में सब होते अनुरक्त।

काम मंगल से मंडित श्रेय
सर्ग, इच्छा का है परिणाम;
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल
बनाते हो असफल भवधाम[1]।

---

1 पृथ्वी।

'दुःख की पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात;
एक परदा यह झीना नील
छिपाये है जिसमें सुख गात'।

जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान
कभी मत इसको जाओ भूल;

विषमता की पीड़ा से व्यस्त
हो रहा स्पंदित विश्व महान;
यही दुख सुख विकास का सत्य
यही भूमा[2] का मधुमय दान।

नित्य समरसता का अधिकार
उमड़ता कारण जलधि समान;
व्यथा से नीली लहरों बीच
बिखरते सुख मणि गण द्युतिमान।'

लगे कहने मनु सहित विषाद :-
'मधुर मारुत से ये उच्छ्वास
अधिक उत्साह तरंग अबाध
उठाते मानस में सविलास !

किंतु जीवन कितना निरुपाय !
लिया है देख नहीं संदेह,
निराशा है जिसका परिणाम
सफलता का वह कल्पित गेह।'

---

1 शरीर, 2 सृष्टि।

कहा आगंतुक ने सस्नेह :-
"अरे, तुम इतने हुए अधीर !
हार बैठे जीवन का दाँव,
जीतते मर कर जिसको वीर।

तप नहीं केवल जीवन सत्य
करुण यह क्षणिक दीन अवसाद;
तरल आकांक्षा से है भरा
सो रहा आशा का आह्लाद।

प्रकृति के यौवन का शृंगार
करेंगे कभी न बासी फूल;
मिलेंगे वे जाकर अति शीघ्र
आह उत्सुक है उनकी धूल।

पुरातनता का यह निर्मोक
सहन करती न प्रकृति पल एक;
नित्य नूतनता का आनंद
किये है परिवर्तन में टेक।

युगों की चट्टानों पर सृष्टि
डाल पद चिह्न चली गंभीर,
देव, गंधर्व, असुर की पंक्ति
अनुसरण करती उसे अधीर

"एक तुम, यह विस्तृत भू खंड
प्रकृति वैभव से भरा अमंद;
कर्म का भोग, भोग का कर्म
यही जड़ का चेतन आनंद।

अकेले तुम कैसे असहाय
यजन कर सकते? तुच्छ विचार !
तपस्वी ! आकर्षण से हीन
कर सके नहीं आत्म विस्तार।

दब रहे हो अपने ही बोझ
खोजते भी न कहीं अवलम्ब;
तुम्हारा सहचर बन कर क्या न
उऋण होऊँ मैं बिना विलम्ब?

समर्पण लो सेवा का सार
सजल संसृति का यह पतवार,
आज से यह जीवन उत्सर्ग
इसी पद तल में विगत विकार।

दया, माया, ममता लो आज,
मधुरिमा लो, अगाध विश्वास;
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिए खुला है पास।

बनो संसृति के मूल रहस्य,
तुम्हीं से फैलेगी वह बेल;
विश्व भर सौरभ से भर जाय
सुमन के खेलो सुन्दर खेल।

'और यह क्या तुम सुनते नहीं
विधाता का मंगल वरदान -
'शक्तिशाली हो, विजयी बनो',
विश्व में गूँज रहा जय गान।

'डरो मत अरे अमृत संतान
अग्रसर है मंगल मय वृद्धि;
पूर्ण आकर्षण जीवन केन्द्र
खिंची आवेगी सकल समृद्धि।

देव-असफलताओं का ध्वंस
प्रचुर उपकरण जुटा कर आज;
पड़ा है बन मानव संपत्ति
पूर्ण हो मन का चेतन राज।

चेतना का सुन्दर इतिहास
अखिल मानव भावों का सत्य;
विश्व के हृदय-पटल पर दिव्य
अक्षरों से अंकित हो नित्य।

विधाता की कल्याणी सृष्टि
सफल हो इस भूतल पर पूर्ण;
पटें सागर, बिखरें ग्रह-पुंज
और ज्वालामुखियाँ हों चूर्ण।

उन्हें चिनगारी सदृश्य सदर्प
कुचलती रहे खड़ी सानंद;
आज से मानवता की कीर्ति
अनिल[1], भू, जल में रहे न बंद।

जलधि के फूटें कितने उत्स
द्वीप, कच्छप डूबें-उतरायँ;
किंतु वह खड़ी रहे दृढ़ मूर्ति
अभ्युदय का कर रही उपाय।

विश्व की दुर्बलता बल बने,
पराजय का बढ़ता व्यापार
हँसाता रहे उसे सविलास
शक्ति का कीड़ामय संचार।

शक्ति के विद्युत्कण, जो व्यस्त
विकल बिखरे हैं, हो निरुपाय;
समन्वय उसका करे समस्त
विजयिनी मानवता हो जाए।"

---

1 हवा।

कविताओं के बारे में

जयशंकर प्रसाद की काव्य रचना **'आँसू'** और **'कामायनी'** के कुछ काव्य अंश (श्रद्धा सर्ग) पाठ्यक्रम में लिए गए हैं। **आँसू** की रचना 1926 ई0 और कामायनी की रचना 1936ई0 में हुई थी। आँसू कविता का मूल भाव है कि समस्त संसार को करुणा और प्रेम की आवश्यकता है। यही भाव मानव को मानव बनाए हुए है। आँसू कामायनी की पूर्व पीठिका है। कामायनी में मन्वन्तर की कथा है अर्थात मानवता के विकास की कहानी। भारतीय मिथक में ऐसा वर्णन मिलता है कि सृष्टि जल प्लावन में नष्ट हो गई तो एक मात्र पुरुष मनु और एक मात्र नारी श्रद्धा बची रही। इन्हीं के सहयोग से मानवता का विकास हुआ। कामायनी की कथा को एक रूपक के माध्यम से रचा गया है जिसमें अर्थ के अनेक स्तर हैं।

आँसू कविता में वियोग की अनुभूति है। अतीत की कोई सुखद अनुभूति कवि के मन में खिन्नता पैदा करती है। कवि अपनी प्रेम वेदना से पृथ्वी को प्रकाशित करना चाहता है। उसके हृदय में करुणा के भाव हैं, और उसके स्वरों में हाहाकार है। कविता में सागर का प्रतीक मानव हृदय की जटिलताओं का प्रतीक है। परंतु मानव-जीवन में इन जटिलताओं के बीच भी आनंद की अनुभूति होती है। मनुष्य में आनंद की यह अनुभूति वर्तमान को कुछ मीठी स्मृति की बात कहती है। कविता में क्षितिज मुक्ति का प्रतीक है। मनुष्य का जीवन जटिलताओं से मुक्त होना चाहता है, लेकिन मुक्त नहीं हो पाता है। इसलिए उसके प्रयत्न बार-बार विफल होते हैं। प्रयत्न विफल होने से उसमें पागलों सी विक्षुब्धता जागती है। सुख-दुःख की अनुभूति से तटस्थ होकर चेतना आनंद का अनुभव करती है। जटा में जिस तरह केश एक दूसरे से उलझ जाते हैं और गुंथ जाते हैं, उसी तरह मानवीय भाव भी जीवन की जटिलताओं के बीच उलझे हुए प्रतीत होते हैं। राग-विराग से परे होकर ही मानव दिव्यता को प्राप्त करता है। कवि में सृजन की पीड़ा है। जीवन की कोई घनीभूत पीड़ा फंतासी बनकर कवि के मस्तिष्क में छायी रहती है, वही फंतासी सृजन में नई अनुभूति के रूप में प्रस्तावित होती है। कवि में दर्द और पीड़ा है। यह पीड़ा उसके काव्य में दृष्टिगोचर होती है। कवि में वेदना की आकुलता और तड़प है। यह आकुलता किसी गहन अंधकार के क्षण में भावहीन दशा में कवि हृदय में उपजती है। कवि अपने जीवन में घोर निराशा के क्षणों में भी आशा को नहीं खोता है। इस संघर्ष के बल पर ही सभ्यता को अपनी रचना का सुंदर उपहार प्रस्तुत करता है। वह जीवन के अनुभवों को भूलने नहीं पाता है। वह निरीक्षण भरी दृष्टि से अपने अनुभवों की आत्मालोचना करता है और काव्यानुभूति का निर्माण करता है।

श्रद्धा काम गोत्र की बालिका है इसलिए श्रद्धा के नाम के साथ उसे कामायनी भी कहा जाता है। देव सृष्टि जलप्लावन में डूब गई। इस जलप्लावन में बीती हुई सभ्यता के अकेले प्रतिनिधि मनु बचते हैं। प्रलय के बाद धरती निकलती है और वनस्पति से धरती में जीवन

संचार शुरू होता है। प्रकृति में आशा का संचार हो रहा है परंतु मनु में अभी जड़ता बनी हुई है। श्रद्धा मनु को रचनात्मक कर्म के लिए प्रेरित करती है। श्रद्धा मनु की चिंताओं को दूर करना चाहती है। श्रद्धा मनु से कहती है तुम सृष्टि के प्रलय में एक मणि सदृश हो। तुम निर्जल भूतल को जीवन की आभा से विभूषित कर रहे हो। मनु के पुरुषत्व को वह जगत का सुलझा हुआ रहस्य मानती है। मनु में विडम्बना है। उसका मन चंचल है लेकिन उसमें आलस्य है और जड़ता है। श्रद्धा के सहयोग से उसके व्यक्तित्व में ये खामियाँ दूर होंगी। प्रसाद मनु के प्रति श्रद्धा के प्रश्न में नाटकीय विडम्बना को रचते हैं। मनु में माधुर्य है, शांति है, वह एकांतप्रिय है, उसमें करुणा का सौन्दर्य है। मानसिक आलस्य में उसका व्यक्तित्व दबा हुआ रह जाता है। मनु जब निर्जन प्रदेश में मधुवाणी को सुनता है तब वह आनंदित हो जाता है। सांध्य कमल और कवि के प्रथम छंद के समान उसमें ऊर्जा का आवेग भर जाता है। मनु का मन जीवन की प्रेरणादायिनी शक्ति और स्फूर्ति से भर जाता है। श्रद्धा के कोमल स्वरों को सुनकर उसे देखने की कौतूहलता उसमें जागती है। इस स्थल पर कवि ने श्रद्धा के रूप वर्णन में अद्भुत प्रतीकों और उपमाओं का प्रयोग किया है।

मनु श्रद्धा से कहता है इस सृष्टि में पृथ्वी और आकाश के बीच जीवन का रहस्य लिए मैं निरुद्देश्य भटक रहा हूँ। वह अपने को उल्का कहता है। उल्का में बुझी हुई ज्वाला होती है। जिसमें जलने का अनुभव है लेकिन वह जल नहीं बुझ रहा होता है। मनु में अतीत की चिंता है। हिमपिंड उसके अतीत चिंतन का प्रतीक है। उसमें वर्तमान के प्रति संशय का भाव है, इसलिए वह शैल निर्झर की तरह प्रवाहशील नहीं बन पाता है। यही समस्या मनु की सबसे बड़ी समस्या है। वस्तुतः वह अपने अतीत से विछिन्न नहीं होना चाहता और वर्तमान में इतिहास की चुनौती उसके सामने है। इसी सोच में उसमें बंजरपन की अनुभूति जागती है। श्रद्धा के आत्मविश्वास को देखकर मनु में जीवन के प्रति नया अनुभव जागता है। श्रद्धा में भाव है। यह भाव उसे पतझड़ में भी हरा रखता है। मनु श्रद्धा को वसंत का दूत मानता है। उसे वह घने अंधकार में बिजली की चमक, गर्मी की शीतल बयार, नक्षत्र की आशा किरण, कवि हृदय का कोमल भाव और मानसिक हलचल के बीच आनंद की अनुभूति देने वाली कल्पना कहता है। उपर्युक्त बिंबों में संघर्ष की अनुभूति है। मनु को श्रद्धा अपना परिचय देती है। वह ललित-कला सीखने के लिए गंधर्व प्रदेश में आई थी। वह मनु से उसके मानसिक क्लेश और पीड़ा का कारण पूछती है। कामायनी मनु को कर्म-पथ की ओर प्रेरित करती है। वह मनु से कहती है दुःख के बीच आनंद की उपलब्धि होती है। रात्रि के गहन अंधकार के बाद ही प्रकाश का विस्तार होता है। यहाँ पर कवि की अनुभूति द्वन्द्वात्मक है। उसका मानना है कि दुःख को भोगे बिना सुख का अनुभव नहीं होता है। नियति ने दुःख-सुख के बीच एक झीना आवरण बना दिया है। विषमता के बीच सृष्टि गतिशील है। सुख-दुःख मानवीय जीवन की उपलब्धि हैं। परंतु मनु में विषाद है यह विषाद मनु के मानस में उत्साह को प्रेरित करता है। विकास के कारण ही देव सभ्यता का ध्वंस हुआ था। जीवन कितना असहाय और अकेला

है इसमें मनु को तनिक भी संदेह नहीं है। मनु जीवन को निराशा का पर्याय मानते हैं। श्रद्धा मनु को फिर भी प्रेरित करती है। कर्म और भोग के समुचित संतुलन का संदेश देती है। बिना आकर्षण के आत्मा का विस्तार भी संभव नहीं है। श्रद्धा सृष्टि के विकास के लिए मनु को संकल्प लेने को कहती है। मनु से ही मानवीय सभ्यता का विस्तार संभव है। वह उसे निर्भय होकर सृष्टि के विकास में सहयोग करने को कहती है। जीवन की समस्त शक्ति को संयोजित कर मानव सभ्यता को विजयी बनाने का संदेश देती है।

'आँसू' कविता की मूल प्रेरणा कोई निजी आंतरिक व्यथा है। निजी व्यथा और आत्मानुभूति की प्रधानता के कारण भाषा की भंगिमा बदल गई है। भाषा लाक्षणिक और चित्रात्मक है। कविता में चित्र प्रकृति के हैं परंतु उनमें कहीं न कहीं मानवीय भावों की व्यंजना है। उदाहरण के लिए एक पद :

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी नीरद माला,
पा कर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला

यहाँ नीरदमाला - हृदय में घने अंधकार का प्रतीक है, झंझा-विक्षोभ का प्रतीक है, गर्जन-वेदना की तड़प और बिजली - दुःख की टीस के अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। वस्तुतः प्रसाद ध्वन्यात्मक शब्दों के प्रयोग से अर्थ को विस्तार देते हैं। शब्दों में बिंबों का प्रयोग है। बिंब से कविता का भाव अद्वैत रूप में जुड़ा हुआ है। भाषा में प्रसाद कोमलकांत शब्दों का चयन अधिक करते हैं। इन शब्दों में अर्थ संगीत है। तत्सम शब्दों में उन्होंने अपनी जटिल भाषानुभूतियों को अभिव्यक्त किया है। आँसू कविता में शिल्प की कोई विशिष्ट संरचना नहीं है। बल्कि यहाँ विविध शिल्पों का अपरिपक्व संयोजन है। दार्शनिक अनुभूति और गीतात्मकता साथ-साथ हैं।

कामायनी एक प्रकार की एलेगरी है। इस कविता का प्रत्येक पात्र प्रतीक पात्र है। श्रद्धा विश्वासमयी भावना की प्रतीक है। श्रद्धा मनुष्य को मंगलमय कल्याण के लिए प्रेरित करती है। कामायनी में फैंटेसी शिल्प का प्रयोग है। फैंटेसी शिल्प में पात्र और कार्य वास्तविक तथ्यों के प्रतीक होते हैं। बिंब के द्वारा कवि ने अपनी-अपनी अनुभूतियों, भावों और कल्पित छवियों को चित्रित किया है। कवि अनुभव को जीवित रूप में रखने के लिए बिंब का प्रयोग करता है। साधारण शब्द में अनुभव जड़ हो जाते हैं :

नील परिधान बीच सुकुमार, खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ बन बीच गुलाबी रंग।

इस पद में श्रद्धा के सौन्दर्य को रचने के लिए फूलों के बिंब का प्रयोग किया गया है। फूल बिजली का है। फूल में यों ही चमक होती है। बिजली का फूल श्रद्धा के अंतः और बाह्य व्यक्तित्व को प्रस्तावित करता है। नीले परिधान घटा के समान हैं। बिजली की चमक के समान श्रद्धा का अधखुला अंग सुशोभित हो रहा है। रंग गुलाबी है। प्रसाद की भाषा तत्सम शब्दों से लदी हुई है। उनकी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है कि वह जीवन के किसी एक संदर्भ का स्पर्श नहीं करती है। उसमें इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान और संस्कृति का बहुआयामी स्पर्श होता है। इन विभिन्न संदर्भों के बीच अन्तर्विरोध पैदा होते हैं। श्रद्धा दर्शन के स्तर पर आनंदवाद या भाववाद से जुड़ती है तो इतिहास के संदर्भ में वह बुद्धिवाद विरोधी प्रतीत होती है।

आँसू हमारे भावों की उपज है। मनुष्य का हृदय भाव के बिना अधूरा है। भाव हमारे दर्द को जगाते हैं। वेदना में भी एक प्रकार का आनंद होता है। सूने हृदय में गहन अंधकार के क्षणों में भी करुणा के भाव मौजूद रहते हैं। यही भाव मानव को निराशा से जूझने की शक्ति प्रदान करते हैं। आज की जटिल समस्याओं की उलझन में उदात्त और कोमल भाव खो गए हैं। यह कवि की चिंता है। कवि प्रेम और करुणा जैसे भाव को उच्चतर महत्व देता है। इन्हीं भावों से सृजनात्मकता संभव है। सृजन अनुभव की उपज है। श्रेष्ठ अनुभव पीड़ा से ही उपजते हैं। इसलिए आँसू भावों के उत्तम सृजन हैं। आँसू के छंद में प्रवाह है। भावों से छंद का तार जुड़ जाने से यह प्रवाह आया है। भाव से लय और आवेग का यह मिलन आगे के कवियों के लिए नया मार्ग प्रस्तुत करता है।

कामायनी का श्रद्धा सर्ग जीवनयात्रा में थके यात्री के लिए एक वरदान है। मनु देव सभ्यता के ध्वंस से गतिहीन और अकर्मण्य हो गया था। उसमें अतीत के प्रति मोह और आकर्षण है। उसके अंतःकरण में और बाह्य जीवन में उजड़ेपन की अनुभूति है। मनु भविष्य के जीवन की जटिलताओं से पलायन करना चाहता है। उसकी मानसिकता में पलायन है। श्रद्धा उसके जीवन में वरदान के सदृश आती है। उसे भविष्य के लिए प्रेरित करती है। श्रद्धा का मानना है मनु के कर्म के फलस्वरूप सृष्टि का विकास नई तरह से संभव है। श्रद्धा सुख-दुःख को विकास का एक हिस्सा मानती है। वह मनु को नई चुनौती का सामना करने के लिए प्रेरित करती है। देव सभ्यता की अराजकता विकास और असफलता से शिक्षा लेकर मानव को नये प्रकार से गतिशील होना चाहिए। मानवता को विजयी बनाने के लिए भौतिकता और आध्यात्मिकता का समन्वय जरूरी है। इसी अर्थ में श्रद्धा का महत्व है।

व्याख्या

''कहा मनु ने ..... वैसा ही हूँ पाषंड''

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रतिनिधि कलाकार हैं। कामायनी उनकी विशिष्ट रचना है। कामायनी में प्रसाद ने इतिहास दर्शन और संस्कृति को समन्वित रूप में प्रस्तावित किया है।

इसमें उन्होंने आधुनिक जीवन के विविध अनुभवों और विविध समस्याओं को एक रूपक के माध्यम से रचने की कोशिश की है। कामायनी में भाववाद और बुद्धिवाद का भयानक अन्तर्द्वन्द्व मिलता है। बुद्धिवाद ने सभ्यता को अनुभूति और राग के बिना बंजर बना दिया है। प्रसाद अपना पक्ष बुद्धिवाद के विरोध में रखते हैं।

प्रस्तुत प्रसंग कामायनी के श्रद्धा सर्ग से लिया गया है। मनु श्रद्धा के सामने अपनी जड़ता को बताता है। वह अपने मनःस्थिति से श्रद्धा को परिचित करवाता है। मनु कामायनी को अपने जीवन की निस्सारता के बारे में बताता है। आकाश और पृथ्वी के बीच उसका जीवन रहस्य बना हुआ है। रहस्य में भावनाओं की धुंध होती है। रहस्य में कोई एक ठोस निष्कर्ष नहीं होता है। विभिन्न भावों का उसमें कोलाहल मौजूद होता है।

मनु में भी कोई भाव ठोस आकार नहीं ले पाया है। इसलिए उसका जीवन रहस्यमय बना हुआ है। नया जीवन उसके सामने नहीं है। इसलिए वह निरुपाय है। विजयदेव नारायण शाही के शब्दों में कहें तो उसमें एक विराट रिक्तता है। यह रिक्तता उसमें अतीत और इतिहास के खंडित होने से पैदा हुई है। वह अपने को उल्का कहता है। उल्का की यह विशेषता होती है कि वह किसी ग्रह उपग्रह या तारे का टूटा हुआ हिस्सा होता है। उसमें उस तारे की ज्वाला विद्यमान होती है लेकिन वह बुझती हुई दशा में होती है। मनु वैसा ही उल्का पिंड है जो देव सभ्यता से टूटकर अलग हुआ है। देव सभ्यता स्वयं में भोगी विलासी सामंती व्यवस्था का प्रतीक है। ऐसी हीन दशा और परिस्थिति में मनु असहाय और अकेला है।

मनु अपने को हतभाग्य कहता है। वह शैल निर्झर नहीं बन सका। शैल निर्झर का अर्थ है, वह पूर्णतः अतीत से विमुक्त नहीं हो सका है। वह हिमपिंड से अलग हो गया है परंतु जल नहीं बन सका है, वह हिमखंड बना हुआ है। वह न जमा हुआ है और न पिघला हुआ।

मनु में अतीत और वर्तमान के प्रति ही चिंता नहीं है उसमें भविष्य के प्रति भी आशंका है। जल जो हिमपिंड न रह पाया जो शैल निर्झर नहीं है, वह जलनिधि में किस प्रकार मिल सकता है जिसमें सामर्थ्य नहीं वह अगतिमय जीवन किस प्रकार से भविष्य को आकार देगा इसी समस्या को यहाँ उठाया गया है।

विशेष

1) प्रसाद इस पद में एक भारतीय की विभाजित मानसिकता को अभिव्यक्त करते हैं।
2) यह विभाजन पश्चिमी सभ्यता मूल्यों के दबाव में हुआ है।
3) मनु के खंडित कालबोध को अभिव्यक्त किया गया है।
4) कुछ ध्वन्यात्मक शब्दों का साभिप्राय प्रयोग है यथा-रहस्य, उल्का, हिमखंड, जलनिधि इत्यादि।
5. भाषा में तत्सम प्रधान शब्दावली का प्रयोग किया गया है। छंद में लय और तुक का नियोजन है।